© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X

# बाज़ारवाद और हिंदी उपन्यास

निशांत आलोक
शोधार्थी
ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय
का. दरभंगा, बिहार,भारत।

**शोध आलेख सार–** भूमंडलीकरण के कारण देश में आए बदलाव से महानगर और नगर ही नहीं गांव और तीर्थस्थल भी प्रभावित हुए हैं। भौतिकता, बाजारीकरण और बढ़ती आधुनिकता के फलस्वरूप आए बदलाव के साथ ही इस कारण से उपजे विकृतियों को इस अवधि के उपन्यासों में पूरी शिद्दत के साथ प्रकट किया गया है। परिवारों में उपजे विघटन की स्थिति और लोगों के अंदर पनपती महत्वाकांक्षा जैसे तमाम पहलू उपन्यासों में उजागर हुए हैं, जो वर्तमान यथार्थ से साक्षात्कार कराते प्रतीत होते हैं।

**मुख्य शब्द–** भूमंडलीकरण, भौतिकता, बाजारीकरण,आधुनिकता, हिन्दी, लाला श्रीनिवासदास, उपन्यास, परीक्षा गुरु।

लाला श्रीनिवासदास के 'परीक्षा गुरु' को हिन्दी का प्रथम उपन्यास माना जाता है। उपन्यास विधा ही अपने आप में पश्चिम की देन है, यदि साहित्य समाज का दर्पण है तो समाज में घटित होने वाली घटनाओं से उसका प्रभावित होना लाजिमी है। भारतेंदु हरिश्चंद्र के युग से आज तक साहित्य ने समाज में होने वाले नित नये परिवर्तनों को सकारात्मक अथवा नकारात्मक ढंग से लिया है। आजादी के आंदोलन में महात्मा गांधी के विचारों ने साहित्य को काफी गहराई तक प्रभावित किया है। अनेक प्रसिद्ध साहित्यकार गांधीवादी विचाराधारा के पुरोधा माने गए। रूस की क्रांति के जनक कार्ल मार्क्स ने दुनिया की विचारधाराओं मे अपना अलग स्थान बनाया। जब यह विचार भारत में पहुंचा तो राजनीति के साथ-साथ साहित्य भी इससे प्रभावित हुआ। अनेक लेखकों ने मार्क्सवादी साहित्य लेखन के बहाने विचारधारा विशेष को पल्लवित-पुष्पित किया। साहित्य में रूमानियत भी पश्चिमी विश्व की देन है।

कथा साहित्य और उपन्यास दोनों का ही यथार्थ से बहुत नजदीक का संबंध है। इसलिए बाजारवाद के प्रभावों का विश्लेषण इनमें अधिक सशक्त ढंग से हो सका है। बाजारवाद ने पूरी दुनिया में आर्थिक असमानता का विस्तार किया है। बाजारवाद के पहले भी दुनिया में गरीबी थी, परंतु इतनी अधिक असमानता नहीं थी। एक तरफ तो अमीरी के पहाड़ खड़े हुए हैं तो दूसरी ओर गरीबी की खाइयां भी बढ़ गयी हैं। धन के विस्तार ने लोगों के सुख-चैन को छीन लिया है। समाज से करुणा का तत्व गायब जैसा होने लगा है। दुनिया पहले ही महानगरीय सभ्यता के बोझ तले दबी हुई थी, रही-सही कसर बाजारवाद ने पूरी कर दी। समृद्धि की चकाचौंध के नीचे दम तोड़ते मानवीय संबधों की कहानियों से कौन परिचित नहीं है। एक अजीब किस्म की लालसा ने मनुष्य जीवन को भर दिया है, जिसे पाने की चाह में वह जमीन-आसमान एक किए हुए है। इन्हीं सब त्रासदियों का चित्रण उपन्यासकारों ने बड़े मनोयोग से किया है। उपन्यास विधा अपने विस्तृत फलक पर बाजारवाद की समस्याओं को और भी विस्तार तथा गहराई में जाकर विश्लेषित करने की स्थिति में है। हिन्दी उपन्यास ने बहुत सूक्ष्म संवेदन, गहराई और विस्तार में जाकर देश, समाज और व्यक्ति पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन कथात्मक धरातल पर किया है। डॉ.पुष्पपाल सिंह ने वर्ष 2007 के तथ्यों पर प्रकाश डालते हुए

लिखा है, ''बड़े-बड़े स्टॉकिस्ट टीवी, फ्रिज, ऐसी, वाशिंग मशीन आदि के लिए उधार आसान किस्तों पर उपलब्ध करा रहे हैं फिर भी दिल नहीं ललचाता तो किसी के साथ मुफ्त बैग, कोई सस्ती घड़ी या ऐसी ही फालतू फंड की वस्तु रिझाने के लिए दी जाती है। यदि आप किसी स्टाकिस्ट, शोरूम से उधार नहीं लेना चाहते तो बैंक आपके द्वारे आ-आकर क्रेडिट कार्ड, उधार का लाइसेंस, बड़ी आसान शर्तो पर उपलब्ध करा रहे हैं। फिर भी बटुए का मालिक इन बहकावों-फुसलावों में हुए कहते हैं, ''हम मार्केटिंग के आदमियों का एक पांव इधर, तो दूसरा पांव नारद मुनि की तरह कहीं और रहता है। नारद मुनि की तरह हम कहीं टिकते नहीं और उन्हें की तरह थोड़ी-सी बात इधर की उधर और उधर की इधर तो हो ही जाती है।''[1]

आज के उपन्यासों का आधार प्रामाणिक अनुभव है। उन अनुभवों के संदर्भ विशाल हैं। उपन्यासकार समस्या की भीतरी परतों को उघाड़ता चलता है। उन्हें सुलझाना चाहता है, परंतु समस्याएं आपस में इस प्रकार गुंथी हुई रहती हैं कि एक सुलझती नहीं और दूसरी मुंह बाए सामने खड़ी दिखाई देती है। आज ऐसा कोई नहीं है जो समस्याओं के घेरे से बाहर है। यही आज का सच है। आज के उपन्यासकारों ने इस दृष्टि से मूल्यों और आदर्शों को परे धकेल दिया है। उन्होंने उसका बोझ अपने कंधे पर नहीं उठाया है। आज के उपन्यास एक नये भाव बोध को लिए हुए हैं। वह आज के जीवन के अनुकूल हैं। संस्कृति, परंपरा और नैतिकता आज अर्थहीन शब्द हैं। 'वर्तमान' और 'क्षण' को जीने की ललक है।

''बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों में जिस तेजी से समय में परिवर्तन आया और सामाजिक जीवन का प्रायः प्रत्येक क्षेत्र प्रभावित हुआ, उसे हिन्दी उपन्यासों ने चित्रित करने की महत्वपूर्ण कोशिश की है।...यह वह दौर है जब सूचना क्रांति ने सदियों पुराने भारतीय समाज के ताने-बाने को तहस-नहस किया। बाजारवाद का प्रभुत्व कायम होने लगा, मानवीय संबंधों के मान बदलने लगे, जीवन की बुनियादी प्रवृत्तियों में भी तेजी से बदलाव हुआ। राजनीति भी बदली, उसके भी मान-मूल्य बदले, जनता के प्रति उसकी पक्षधरता में कमी आयी। साम्प्रदायिकता उभरी, जातियों के बीच भेदभाव पैदा हुआ, ऐसे में सब भौंचक्क रह गए हैं कि उनकी क्या भूमिका हो?''[2] भूमंडलीकृत भारत के हिंदी औपन्यासिक परिदृश्य में भगवानदास मोरवाल के 'काला पहाड़' में मेवात को कथ्य बनाकर मुस्लिम परिवेश को प्रस्तुत किया गया है- "ई वही मेवात है जाके मेवन्ने सैंतालिस की भग्गी में जिन्ना का बहकावा में न आके पाकस्तान जाण सू साग मना कर दी।"[3] लेकिन "इन बदकिस्मत गांवों को अंग्रेजों ने जरूरी सहूलियतों से महरूम किया ही बल्कि आजादी के बाद आज भी ये गाँव उन सहूलियतों से महरूम हैं।"[4] परिणाम यह कि लोग रोजी, रोजगार की तलाश में बड़े शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं क्योंकि "या गांवों में रहकर कोई भूखो थोड़ी मरणो है।"[5] नासिर शर्मा ने 'कुइयां जान' और 'जीरो रोड' में मुस्लिम परिवेश को भूमंडलीकृत, बाजारवाद की गिरफ्त का समय प्रस्तुत किया। 'कुइयां जान' में मुस्लिम पारिवारिक परिवेश में 'जल संकट-जल सम्पदा' के निरंतर त्रास की समस्या को बड़ी गहरी कथात्मक संवेदना से उठाया गया है। 'जीरो रोड' दुबई के जीवन पर केन्द्रित उपन्यास है जिसमें इलाहाबाद से दुबई गया सिद्धार्थ अपना जीवन बनाने की कोशिश में दुबई के एतिहासिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक और व्यावसायिक स्थितियों को प्रकट करता है। उपन्यास सांस्कृतिक विस्थापन की समस्याओं से जूझता है।

स्वयंप्रकाश का उपन्यास 'ईंधन' बाजारीकरण और बाजारवाद के लिए ईंधन बन गए आदमी की व्यथा-कथा कहता है। रोहित मध्यमवर्गीय परिवार से आया है लेकिन उसकी पत्नी आधुनिक विचारों वाली है, इस कारण दोनों में तनाव उपजता है। अंततः रोहित भी आधुनिक बनता है और अपनी पत्नी से भी आगे निकल जाता है। बेटू की मौत उसे झकझोर कर रख देती है। घर में इकट्ठा की गई तमाम विलासिता की चीजें उसे घृणित लगने लगती है। अधिक से अधिक धन कमाने और धन के जरिए समाज में अपनी जगह बनाने की मानसिकता इसी बाजारवाद की देन है जिसमें पिसकर रोहित और स्निग्धा का जीवन नारकीय हो जाता है। आर्थिक बदलाव अर्थव्यवस्था के साथ ही सामाजिक परिवेश और पारिवारिक परिदृश्य को भी परिवर्तित कर देता है। स्वयंप्रकाश के उपन्यास की तरह ही प्रियंवद का उपन्यास 'परछाईं नाच' भी इस प्रश्न को उठाता है। देश की बदली आर्थिक तस्वीर में कंपनियों का बोलबाला है और उद्योगपतियों ने आस्था अपने अनुरूप बना रखी है। देश की राजनीति भी पूंजीपतियों की भाषा बोलती है। अनहद और किंशुक आम जनता के प्रतीक हैं, जो बाजारवाद और पूंजीवादी व्यवस्था में मरने के लिए मजबूर है।

रवींद्र वर्मा के उपन्यास 'जवाहर नगर' उपभोक्तावाद और बाजारीकरण के फलस्वरूप एक बस्ती जवाहर नगर में आ रहे बदलाव की कथा नहीं है, वरन इसके जरिए हर शहर-कस्बा-बस्ती के बदलते चेहरे को बेनकाब किया गया है। उपभोक्तावाद ने माधुरी जैसी युवतियों के अंदर अंधी महत्वाकांक्षा भर दी है जिसे पाने के लिए किसी भी सीमा को पार किया जा सकता है। वहीं दूसरी ओर स्वतंत्र जैसे युवकों को दम्भी, स्वार्थी, लम्पट और नैतिकताविहीन बना दिया है जो किसी की भी भावनाओं से खेल सकते हैं। संस्कारों के बंधनों को तोड़ सकते हैं।अमर जैसे नवयुवक भी हैं, जिनके अंदर नीतिमत्ता और संस्कारों का मोह है लेकिन समय के बदलाव के अनुरूप बदल जाने की दी हुई इच्छा जागृत है। उपभोक्तावाद और बाजारीकरण बनाम परंपरा, स्वाभिमान और संस्कृति के संघर्ष में जवाहर नगर के दो मित्र स्वतंत्र और अमर आमने-सामने होते हैं। रवींद्र वर्मा के उपन्यास में 'अपनी झांसी नहीं दूंगा' में यह संघर्ष दो भाइयों- मुरली और कन्हैया के बीच चलता है। परंपरा, संस्कृति, आत्माभिमान, मर्यादा और निस्वार्थ प्रेम के खिलाफ खड़ी बाजारवादी-पूंजीवादी ताकतें अपना वर्चस्व स्थापित करना चाहती हैं।

कामतानाथ का उपन्यास 'समुद्र तट पर खुलने वाली खिड़की' तीर्थ स्थानों में बढ़ती भौतिकता, बाजारीकरण और पूंजीवाद के दबाव को उजागर करता है। तीर्थ स्थानों का धार्मिक स्वरूप विकृत होकर धार्मिक कट्टरता और वैचारिक संकीर्णता की हदों को पार कर गया है तो दूसरी ओर पर्यटन स्थल के रूप में भी तीर्थस्थल विकसित हो रहे हैं। दोनों के अलग-अलग रूप हैं। एक ओर धर्म के ठेकेदारों, पुजारियों और मंदिरों की जिंदगी है तो दूसरी तरफ छोटे दुकानदार, रिक्शा चालक, और आलीशान होटल हैं। विदेशों से आने वाले पर्यटक के साथ ही आधुनिक विचारधारा वाले देशी सैलानियों के लिए यह स्थल मौज मस्ती और सैर-सपाटे के लिए है।

पंकज मित्र का उपन्यास 'हुडुकलुल्लु' गांवों में हावी होते बाजारीकरण, भौतिकता और संचार क्रांति के दुष्प्रभाव से मोहभंग की स्थिति को उजागर करता है। शहरों से होते हुए गांव तक पहुंची हुई भौतिकता, फैशन परस्ती, विज्ञापन संस्कृति, सूचना क्रांति और बाजारवादी मानसिकता के कारण गांव का स्वरूप बदल गया और परंपरागत संस्कृति के साथ ही मानव मूल्यों पर भी संकट गहराने लगा। तेजी के साथ बदलती स्थितियों के परिणामस्वरूप उपजा मोहभंग वर्तमान समय की त्रासदी है।

सुषमा जगमोहन का उपन्यास 'जिंदगी ई-मेल' मध्यमवर्गीय परिवार की असीमित महत्वाकांक्षाओं और बढ़ती भौतिकता के पीछे भागने के कारण उपजी स्थितियों को प्रकट करता है। उपन्यास का केंद्रीय पात्र दीप है जो फ़िल्मी पत्रकार है। अधिक से अधिक धन कमाकर बच्चों को उच्च शिक्षा दिलाने और समाज में हैसियत बनाने की महत्वाकांक्षा उन्हें विदेश जाने के लिए उकसाती है। दीप, तनु और दोनों बच्चे कर्ज के धन से कनाडा चले जाते हैं। दीप तो वापस लौट आता है मगर तनु वही रहते हुए अस्थाई नौकरी करती है। दीप और तनु अपने बिखरे परिवार के कारण दुखी रहते हैं।

तनु को कनाडा में स्थाई नौकरी नहीं मिलती है और दीप दुबारा कनाडा नहीं जा पाता। दोनों के दुख-दर्द, बातचीत, पर्व-त्यौहार और जिंदगी ई-मेल में सिमट कर रह जाती है। सुखी और सफल दांपत्य का स्वप्न भी ई-मेल तक ही सीमित रह जाता है।

कुसुम कुमार का उपन्यास 'पूर्वी द्वार' भी अति महत्वाकांक्षा और भौतिकता में भारतीय लोगों के पीछे छूटते सुखी परिवारों की दारुण दशा को प्रकट करता है। सेवानिवृत्त लेफ्टिनेंट कर्नल सत्यार्थ वर्मा के पुत्र अपनी मां शारदा को बहुत चाहते हैं, लेकिन उनकी महत्वाकांक्षा इसमें आड़े आ जाती है और दोनों विदेश में बस जाते हैं। मां के प्रति स्नेह उनके फोन पर बातचीत करने में ही सिमट जाता है। इसी प्रकार सांघी जी हैं जिनकी अपने बेटे के घर में नौकर जैसी हालत है। अंततः सांघी जी की मौत 'फादर्स डे' पर ही हो जाती है। उपन्यास में वर्णित इसी प्रकार की कई स्थितियां पारिवारिक और सौहार्द के बीच सेंध लगाती बाजारवादी मानसिकता, भौतिकता और स्वार्थी प्रवृत्ति के कारण उपजी है।

भूमंडलीकरण के कारण देश में आए बदलाव से महानगर और नगर ही नहीं गांव और तीर्थस्थल भी प्रभावित हुए हैं। भौतिकता, बाजारीकरण और बढ़ती आधुनिकता के फलस्वरूप आए बदलाव के साथ ही इस कारण से उपजे विकृतियों को इस अवधि के उपन्यासों में पूरी शिद्दत के साथ प्रकट किया गया है। परिवारों में उपजे विघटन की स्थिति और लोगों के अंदर पनपती महत्वाकांक्षा जैसे तमाम पहलू उपन्यासों में उजागर हुए हैं, जो वर्तमान यथार्थ से साक्षात्कार कराते प्रतीत होते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1·एक ब्रेक के बाद, अलका सरावगी, पृष्ठ 8

2.उपन्यास की समकालीनता, ज्योतिष जोशी, पृष्ठ 151

3.काला पहाड़, भगवानदास मोरवाल, पृष्ठ 15

4.काला पहाड़, भगवानदास मोरवाल, पृष्ठ 20

5.काला पहाड़, भगवानदास मोरवाल, पृष्ठ30